Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
June 2024 5(6), 3022–3028

HISTORICAL STUDY OF CULTURAL STRUCTURE OF CHHATTISGARH: TRADITION, RELIGION, FOLK ART AND CONTEMPORARY CHALLENGES

छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक संरचना का ऐतिहासिक अनुशीलन: परंपरा, धर्म, लोककला और समकालीन चुनौतियाँ

Jyotima Patel [1], Sanjana Singh [2]

[1] Research Scholar, Department of History, Kalinga University, Nava Raipur, Chhattisgarh, India
[2] Professor, Department of History, Kalinga University, Nava Raipur, Chhattisgarh, India

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i6.2024.6099

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: The cultural heritage of Chhattisgarh is a unique combined heritage of ancient traditions, tribal beliefs, folk arts and temple architecture, which reflects the social diversity of this region. This research systematically reviews the historical development of Chhattisgarh's cultural heritage, in which religious, social and architectural aspects of ancient and medieval periods have been analyzed. The research has specially highlighted festivals like Hariyali (Harela), Bhojali, traditional arts like Karma dance, wall painting and major cultural places like Sirpur and Malhar.

In addition, this study also highlights the contradictions and syncretism between mainstream religion and folk religion, where worship of village deities and religious rituals are deeply embedded in the social structure. The influence of modernity, urbanization, education and digital technology has raised new questions about cultural identity, but at the same time has also created opportunities for innovation for preservation. This research underlines the need for cultural preservation through policy reforms and educational initiatives.

Hindi: छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विरासत प्राचीन परंपराओं, जनजातीय आस्थाओं, लोक कलाओं और मंदिर स्थापत्य की एक अनूठी सम्मिलित धरोहर है, जो इस क्षेत्र की सामाजिक विविधता को प्रतिबिंबित करती है। यह शोध छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विरासत के ऐतिहासिक विकास की क्रमिक समीक्षा करता है, जिसमें प्राचीन एवं मध्यकालीन कालखंडों के धार्मिक, सामाजिक और स्थापत्य पक्षों का विश्लेषण किया गया है। शोध में हरियाली (हरेला), भोजली जैसे पर्वों, कर्मा नृत्य, दीवार चित्रांकन जैसी पारंपरिक कलाओं तथा सिरपुर व मल्हार जैसे प्रमुख सांस्कृतिक स्थलों को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।

इसके अतिरिक्त, यह अध्ययन मुख्यधारा धर्म एवं लोकधर्म के मध्य अंतर्विरोधों और समन्वय की प्रक्रिया को भी उजागर करता है, जहाँ ग्राम देवी-देवताओं की पूजा और धार्मिक अनुष्ठान सामाजिक संरचना में गहराई से जुड़े हुए हैं। आधुनिकता, शहरीकरण, शिक्षा और डिजिटल तकनीक के प्रभाव ने सांस्कृतिक पहचान को नए प्रश्नों के समक्ष लाकर खड़ा किया है, परंतु इसी के साथ संरक्षण हेतु नवाचार के अवसर भी उत्पन्न हुए हैं। यह शोध नीतिगत सुधारों और शैक्षणिक पहल के माध्यम से सांस्कृतिक संरक्षण की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

Keywords: Culture of Chhattisgarh, Folk Traditions, Tribal Beliefs, Cultural Preservation, Syncretistic Identity छत्तीसगढ़ की संस्कृति, लोक परंपराएँ, जनजातीय विश्वास, सांस्कृतिक संरक्षण, समन्वित पहचान

1. प्रस्तावना

1.1. शोध का उद्देश्य और महत्त्व

छत्तीसगढ़ एक समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से परिपूर्ण राज्य है, जहाँ परंपरा, धर्म, लोककला और सामाजिक संरचना का गहरा अंतर्संबंध देखने को मिलता है। यह शोध-पत्र छत्तीसगढ़ की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विशेषताओं का गहन अध्ययन करता है, जिसमें यह लक्ष्य है कि लोक परंपराओं, धार्मिक विश्वासों, लोकगीतों, स्थापत्य शैलियों तथा सांस्कृतिक जीवन के विविध पक्षों की ऐतिहासिक जड़ों को उजागर किया जाए। इस अध्ययन का उद्देश्य न केवल संस्कृति की स्थिरता को समझना है, बल्कि यह भी विश्लेषण करना है कि समकालीन वैश्वीकरण और आधुनिकता के प्रभावों के बीच राज्य की सांस्कृतिक अस्मिता कैसे संरक्षित और पुनर्परिभाषित हो रही है [1]।

1.2. शोध की विषयवस्तु की प्रासंगिकता

छत्तीसगढ़ में सांस्कृतिक विविधता जनजातीय और गैर-जनजातीय समुदायों की परंपराओं, उत्सवों और धार्मिक अनुष्ठानों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। इन परंपराओं में गहराई से जुड़े होने के बावजूद, बदलते सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य, विशेषकर डिजिटल युग, बाजारवाद और शहरीकरण के चलते, इनका अस्तित्व संकट में है [2]। अतः इस विषय पर शोध करना न केवल सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से प्रासंगिक है, बल्कि यह वर्तमान सामाजिक अध्ययन, सांस्कृतिक नीति निर्माण और शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है [3]।

1.3. शोध प्रश्न

इस शोध-पत्र में निम्नलिखित प्रमुख प्रश्नों को संबोधित किया गया है:

- छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक परंपराएँ किस ऐतिहासिक प्रक्रिया से विकसित हुईं?
- धर्म, लोककला और स्थापत्य में कैसे सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक चेतना अभिव्यक्त होती है?
- आधुनिकता और वैश्वीकरण की पृष्ठभूमि में सांस्कृतिक विरासत के समक्ष कौन-कौन सी चुनौतियाँ उपस्थित हैं?
- सांस्कृतिक संरक्षण हेतु किन उपायों और रणनीतियों की आवश्यकता है?

1.4. शोध की सीमाएँ

यह अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य तक सीमित है और इसका मुख्य फोकस वहाँ की सांस्कृतिक परंपराओं, धार्मिक मान्यताओं, लोक कलाओं एवं स्थापत्य विरासत पर है। यह शोध मुख्यतः गुणात्मक (qualitative) विश्लेषण पर आधारित है; इसमें सांस्कृतिक परिवर्तन के मात्रात्मक आँकड़ों का समावेश सीमित है। इसके अतिरिक्त, क्षेत्रीय बोलियों और अप्रकाशित मौखिक परंपराओं तक सीमित पहुँच के कारण कुछ पहलुओं का विश्लेषण अपूर्ण रह सकता है।

1.5. पद्धति: ऐतिहासिक, वर्णनात्मक और तुलनात्मक विश्लेषण

यह शोध ऐतिहासिक दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसमें प्राचीन और मध्यकालीन स्रोतों, पुरातात्विक अभिलेखों, स्थापत्य और मूर्तिकला के साक्ष्यों का अध्ययन किया गया है। साथ ही वर्णनात्मक पद्धति के माध्यम से लोककला, धार्मिक अनुष्ठानों और लोकजीवन की व्याख्या की गई है। तुलनात्मक विश्लेषण के अंतर्गत पारंपरिक सांस्कृतिक रूपों और समकालीन परिवर्तनों के बीच संबंधों को उजागर किया गया है [4][5]।

2. छत्तीसगढ़ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

2.1. छत्तीसगढ़ का प्राचीन और मध्यकालीन इतिहास

छत्तीसगढ़ क्षेत्र का इतिहास वैदिक युग से पूर्व का माना जाता है, जहाँ पुरातात्विक साक्ष्य प्रागैतिहासिक मानव सभ्यताओं की उपस्थिति की पुष्टि करते हैं। ऐतिहासिक रूप से यह क्षेत्र दक्षिण कोसल के नाम से जाना जाता था, जो महाकाव्यों एवं पुराणों में उल्लिखित है। मौर्य काल (3री शताब्दी ई.पू.) से लेकर गुप्त, सोमवंशी, कलचुरी, तथा मराठा शासन तक, यह भूभाग विभिन्न शासकों के अधीन रहा और सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध होता गया [6]। विशेष रूप से सिरपुर (पुरातात्विक स्थल) के उत्खननों से यह ज्ञात होता है कि यहाँ सातवीं शताब्दी ईस्वी में स्थापत्य और बौद्ध धर्म का प्रभाव

व्यापक रूप से फैला था [7]। इसके अतिरिक्त, कलचुरी वंश के राजाओं ने छत्तीसगढ़ में शैव, वैष्णव और जैन मंदिरों के निर्माण को प्रोत्साहित किया, जिससे क्षेत्र में धार्मिक बहुलता और सांस्कृतिक विविधता का समन्वय स्थापित हुआ [8]।

2.2. जनजातीय एवं गैर-जनजातीय सामाजिक संरचना का उद्भव

छत्तीसगढ़ की सामाजिक संरचना में जनजातियाँ एक केंद्रीय भूमिका निभाती रही हैं। यहाँ की प्रमुख जनजातियाँ गोंड, बैगा, उरांव, कोरकू, और कंवर अपने विशिष्ट रीति-रिवाजों, भाषाओं और धार्मिक विश्वासों के माध्यम से सामाजिक एवं सांस्कृतिक ढाँचे को आकार देती रही हैं [9]। गैर-जनजातीय समाज में भी कृषि आधारित जातियाँ, कारीगर वर्ग, और पुरोहित समुदायों की सक्रियता रही है, जिनके बीच सामाजिक विनिमय और सांस्कृतिक सहअस्तित्व के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

2.3. सांस्कृतिक प्रवाहों और समागम का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक संरचना एक जीवंत मिश्रण है, जिसमें आदिवासी परंपराएँ, आर्य संस्कृति, बौद्ध-जैन प्रभाव तथा मध्यकालीन भक्ति आंदोलन का समावेश हुआ है। भक्ति संतों जैसे गुरु घासीदास, कबीर पंथी प्रभाव, और सतनाम परंपरा ने सामाजिक समता और धार्मिक उदारवाद को बढ़ावा दिया [10]। यह समागम न केवल धार्मिक विश्वासों में, बल्कि कलाओं, संगीत, पहनावे, और सामाजिक उत्सवों में भी झलकता है, जिससे छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक अस्मिता एक विशिष्ट पहचान ग्रहण करती है।

3. लोक परंपराएं और सांस्कृतिक अस्मिता

3.1. प्रमुख लोक परंपराओं का वर्णन

छत्तीसगढ़ की संस्कृति विविध लोक परंपराओं से समृद्ध है। यहाँ की प्रमुख परंपराओं में सूखा बाना, जो वर्षा न होने पर गाँव की महिलाओं द्वारा देवताओं को प्रसन्न करने हेतु किया जाता है; भोजली, जिसमें युवतियाँ मिट्टी के पात्रों में अंकुरण करती हैं और फसल की समृद्धि के लिए प्रार्थना करती हैं; तथा हरेली, जो कृषक जीवन से जुड़ा पारंपरिक पर्व है, जिसमें कृषि उपकरणों की पूजा होती है [11]। इन परंपराओं में देवी-देवताओं के प्रति श्रद्धा, प्रकृति के साथ सामंजस्य, और सामाजिक सहभागिता की झलक मिलती है। गीत, नृत्य, कथा, और प्रतीकात्मक क्रियाएं इन परंपराओं को जीवंत बनाए रखती हैं।

3.2. सामाजिक समरसता और लोक चेतना में इन परंपराओं की भूमिका

लोक परंपराएँ समुदायों को एकजुट करने का कार्य करती हैं। त्योहारों और अनुष्ठानों में जाति-धर्म की सीमाएँ कमज़ोर पड़ती हैं और सामाजिक समरसता को बल मिलता है। जैसे भोजली गीतों में महिलाएँ मिलकर लोकधुनों पर समूह नृत्य करती हैं, जिससे सामूहिक चेतना और स्त्री सहभागिता दोनों का प्रकट होता है [12]।

3.3. सांस्कृतिक अस्मिता के निर्माण में योगदान

ये परंपराएँ केवल उत्सव नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता का निर्माण करने वाले तत्व हैं। जनजातीय परंपराओं का लोकगीतों, पहनावे, और लोककथाओं में जीवंत रूप में बना रहना यह दर्शाता है कि परंपरा एक निरंतर चलने वाली सामाजिक प्रक्रिया है। आधुनिक संदर्भ में ये परंपराएँ सांस्कृतिक पुनरावलोकन और पहचान की पुनर्स्थापना के लिए उपयोगी उपकरण बन गई हैं, विशेषकर जब राज्य पर्यटन, शैक्षिक पाठ्यक्रम और सांस्कृतिक महोत्सवों के माध्यम से इन्हें पुनर्जीवित करने का प्रयास करता है [13]।

4. स्थापत्य, मूर्तिकला और चित्रकला का ऐतिहासिक विकास

4.1. मंदिर निर्माण शैलियाँ (नागर, द्रविड़ और वेसर मिश्रण)

छत्तीसगढ़ की मंदिर निर्माण परंपरा स्थापत्य कला के विविध तत्वों का सम्मिलन है। सिरपुर, राजिम, भोरमदेव और मल्हार जैसे स्थलों पर पाई जाने वाली मंदिर वास्तुशिल्पीय संरचनाएँ प्राचीन काल से लेकर मध्यकाल तक की नागर शैली, द्रविड़ शैली तथा वेसर (मिश्रित) शैली का अद्भुत समन्वय

प्रदर्शित करती हैं [14]। राजिम स्थित राजीव लोचन मंदिर (8वीं शताब्दी) में नागर शैली के पंचरथ शिखर और नक्काशीदार स्तंभ दृष्टिगोचर होते हैं, वहीं भोरमदेव मंदिर में वेसर शैली के लक्षण, जैसे बेलबूटों और भित्तियों की बारीक कारीगरी, देखने को मिलती है [15]।

4.2. प्रमुख मूर्तिकला उदाहरण (भोपालपट्टनम, सिरपुर, मल्हार)

मल्हार (बिलासपुर) से प्राप्त विष्णु, नृसिंह, महिषासुरमर्दिनी तथा जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ गुप्तोत्तर और कलचुरी कालीन मूर्तिकला की उत्कृष्टता को दर्शाती हैं। सिरपुर में बुद्ध और शिव की मूर्तियाँ तथा वज्रयान बौद्ध प्रभावों वाले स्तूप इस क्षेत्र के धार्मिक समावेश को प्रमाणित करते हैं [16]। भोपालपट्टनम क्षेत्र में प्राप्त आदिम मूर्तियाँ, विशेषकर ग्रामीण देवी-देवताओं की मूर्तियाँ, एक ओर आदिवासी धार्मिकता को उजागर करती हैं, वहीं दूसरी ओर उन्हें लौकिक जीवन से जोड़ती हैं [17]।

4.3. लोकचित्रकला और ग्रामीण स्थापत्य की विशेषताएं

छत्तीसगढ़ की लोकचित्रकला में विशेष रूप से दीवारों और मांडनों पर उकेरी गई पेंटिंग्स, जैसे गोदना चित्र, पिठौरी और लोक देवी-देवताओं के प्रतीकात्मक चित्र, उल्लेखनीय हैं। ये चित्र न केवल सौंदर्यशास्त्र से जुड़ी परंपरा को संरक्षित करते हैं, बल्कि धार्मिक एवं मौखिक परंपराओं की अभिव्यक्ति भी करते हैं [18]। ग्रामीण स्थापत्य में बाँस, मिट्टी और गोबर से बने मकान, स्थानीय वास्तुकला की सादगी, जलवायु-उपयुक्तता और सांस्कृतिक भावना के जीवंत प्रमाण हैं।

5. लोकगीत, नृत्य और त्योहारों का सांस्कृतिक महत्व

5.1. विवाह गीत, देवी गीत, फाग गीत आदि का सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण

छत्तीसगढ़ के लोकगीत लोकजीवन की सामाजिक संरचना, भावनाओं और परंपराओं का सजीव दस्तावेज हैं। विवाह गीत जैसे सोहर और सहजन स्त्रियों की भूमिका, सामाजिक रिश्तों और उत्सव की भावना को उजागर करते हैं। देवी गीत शक्तिपूजा और मातृवर्चस्व की परंपरा को स्वर देते हैं, विशेषकर नवरात्रि और हरेली जैसे अवसरों पर [19]। फाग गीत, जो वसंत ऋतु में गाए जाते हैं, प्रेम, रंग और हास्य का समन्वय हैं। इन गीतों में मिथकीय पात्रों का समावेश होता है, जिससे लोक धर्म और मनोरंजन का सुंदर समावेश दिखाई देता है [20]।

5.2. कर्मा, ददरिया, राउत नाचा जैसे लोकनृत्यों की परंपरा

कर्मा नृत्य, गोंड और अन्य जनजातीय समुदायों द्वारा किया जाने वाला एक धार्मिक नृत्य है जो प्रकृति, ऋतुओं और आत्मा की शुद्धता को समर्पित है। ददरिया, एक प्रेमगीत आधारित लोकनृत्य है, जिसमें युवा वर्ग संवादात्मक शैली में लोकबोलियों और लयबद्धता के साथ भाग लेते हैं। राउत नाचा, एक वीरता और समुदाय की रक्षा से जुड़ा नृत्य है, जो मुख्यतः यादव समुदाय द्वारा दीपावली पर किया जाता है। यह नृत्य प्राचीन कृषक संस्कृति और गाय-पालन पर आधारित जीवनशैली को जीवित रखता है [21]।

5.3. क्षेत्रीय त्योहारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और समकालीन रूप

हरेली, तीजा, पोला, छेरछेरा जैसे त्योहार कृषि-प्रधान जीवनशैली से जुड़े हैं, जिनकी उत्पत्ति ऋतुचक्र और पारंपरिक कृषि उपकरणों के प्रयोग से संबंधित है। समकालीन समय में इन त्योहारों को राज्य स्तर पर सांस्कृतिक महोत्सवों के रूप में पुनर्परिभाषित किया जा रहा है, जिससे न केवल जन सहभागिता बढ़ी है, बल्कि सांस्कृतिक पर्यटन को भी बढ़ावा मिला है [22]।

6. धर्म और लोक विश्वास: एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण

6.1. जनजातीय देवता, ग्राम देवता और देवी पूजा की परंपराएँ

छत्तीसगढ़ की धार्मिक चेतना की जड़ें जनजातीय और ग्राम्य संरचनाओं में गहराई से समाई हुई हैं। जनजातीय समाज में बुड़हा देव, थान देवी, दुलहा देव, लिंगो देव जैसे देवताओं की पूजा होती है, जिनका संबंध प्रकृति, पशुपालन, कृषि और पूर्वजों की स्मृति से होता है [23]। ग्राम देवताओं, जैसे भैरो बाबा, मातादेवी, और चेरू देव, को गाँव की सुरक्षा और समृद्धि के प्रतीक के रूप में पूजा जाता है। देवी पूजा परंपराएँ जैसे नवरात्रि में जंवारा

और गौरी पूजा, मातृशक्ति और उर्वरता की सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ हैं [24]। यह पूजा पद्धति बौद्धिक से अधिक भावनात्मक और सामुदायिक होती है, जिसमें रीति-रिवाज, बलि, गीत और नृत्य का प्रयोग धार्मिक अनुष्ठानों को सामाजिक पर्व में रूपांतरित कर देता है।

6.2. लोकधर्म बनाम मुख्यधारा धर्म का तुलनात्मक अध्ययन

लोकधर्म की विशेषता इसका लचीलापन, सामूहिकता, प्रकृति से जुड़ाव, और आचरण आधारित श्रद्धा है। यह धर्म मंदिर, ग्रंथ या पुरोहित पर नहीं, बल्कि समुदाय, स्थानिक देवता, और मौखिक परंपराओं पर आधारित होता है [25]। मुख्यधारा धर्म (जैसे वैदिक ब्राह्मणवादी परंपरा) अधिक संरचित, ग्रंथोन्मुखी और औपचारिक होता है। छत्तीसगढ़ में दोनों धाराएं समानांतर रूप से विद्यमान रही हैं; उदाहरणस्वरूप, गोंड समाज में शिव को बुड्ढा देव के रूप में स्वीकार किया गया, जबकि सतनाम पंथ ने ब्राह्मणवादी कर्मकांडों को नकारते हुए जातिविहीन समाज की कल्पना की [26]।

6.3. धार्मिक अनुष्ठानों का सामाजिक संदर्भ

छत्तीसगढ़ के धार्मिक अनुष्ठान केवल अध्यात्म का प्रदर्शन नहीं, बल्कि सामाजिक एकता, परंपरा, और संस्कृति का भी आयोजन होते हैं। दशगात्रि अनुष्ठान, देवी जागरण, देवस्थल पूजा, और भोंगा नृत्य जैसे क्रियाकलाप सामाजिक सहभागिता, पीढ़ीगत स्थानांतरण, और लोकज्ञान के संप्रेषण के साधन हैं।

इन अनुष्ठानों के माध्यम से सामाजिक संरचना, लिंग भूमिकाएँ, और सामुदायिक मूल्य सुदृढ़ होते हैं [27]।

7. आधुनिकता और सांस्कृतिक परिवर्तन

7.1. परंपरा और आधुनिकता के बीच का द्वंद्व

छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक संरचना आज दो ध्रुवों परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन साधने का प्रयास कर रही है। जहाँ एक ओर लोक परंपराएँ सांस्कृतिक पहचान का वाहक बनी हुई हैं, वहीं दूसरी ओर शिक्षा, मीडिया, और तकनीकी विकास के प्रभाव से इनमें विचलन भी उत्पन्न हो रहा है।

उदाहरणतः, पारंपरिक लोकगीतों की जगह फिल्मी धुनें ले रही हैं; सामुदायिक अनुष्ठान अब प्रायोजित उत्सवों में परिवर्तित हो रहे हैं [28]।

7.2. लोक संस्कृति पर शहरीकरण, शिक्षा, और तकनीक का प्रभाव

शहरीकरण ने सामूहिकता की भावना को चुनौती दी है; पारंपरिक त्योहारों की स्थानिकता अब धीरे-धीरे बिखर रही है। शिक्षा के माध्यम से भले ही जागरूकता बढ़ी हो, परंतु इसके साथ ही पीढ़ीगत सांस्कृतिक अंतर भी बढ़ा है, जहाँ युवा वर्ग लोकपरंपराओं को पिछड़ेपन से जोड़ने लगा है [29]। तकनीक, विशेषकर सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म, लोककलाओं के संरक्षण और प्रदर्शन का नया माध्यम तो बन रहे हैं, परंतु पारंपरिक प्रस्तुति के रूपों में विकृति भी ला रहे हैं।

7.3. सांस्कृतिक संरक्षण की चुनौतियाँ और अवसर

आज की प्रमुख चुनौती यह है कि लोकसंस्कृति को केवल संग्रहालयों या मंचीय प्रस्तुतियों तक सीमित न कर दिया जाए। सांस्कृतिक संरक्षण के लिए जन-सहभागिता, विद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रमों में समावेश, शहरी-ग्रामीण संवाद, और डिजिटल अभिलेखन जैसे प्रयास आवश्यक हैं [30]। साथ ही, पर्यटन, कला मेले, और नवाचारपरक संचार माध्यम लोकसंस्कृति को जीवित रखने और युवाओं को जोड़ने के कारगर साधन हो सकते हैं।

8. सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण: नीति और भविष्य की दिशा

छत्तीसगढ़ की समृद्ध लोकसंस्कृति, जो सदियों से मौखिक परंपराओं, अनुष्ठानों, स्थापत्य, लोकगीतों और धार्मिक विश्वासों के माध्यम से संरक्षित रही है, आज वैश्वीकरण, बाजारवाद और तकनीकी आधुनिकीकरण के दबाव में अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है। पारंपरिक लोकधरोहर जैसे कि फाग गीत, कर्मा नृत्य, सिरपुर की मूर्तिकला, हरेली और भोजली जैसे त्योहार अब धीरे-धीरे शहरीकरण और जीवनशैली में हो रहे बदलाव के कारण विस्मृति की ओर अग्रसर हैं। [31] वैश्वीकरण और बाजारवाद ने जहां आर्थिक अवसर प्रदान किए हैं, वहीं दूसरी ओर स्थानीय संस्कृति के आत्मसात होने की प्रवृत्ति को भी तेज किया है। बाज़ार केंद्रित सांस्कृतिक प्रस्तुतियों ने मूल स्वरूप को न केवल कमज़ोर किया है, बल्कि उसे एक 'उपभोक्ता

उत्पाद' के रूप में ढालने का प्रयास भी किया है। [32] इस संकट से उबरने के लिए नवाचारात्मक संरक्षण रणनीतियाँ अत्यंत आवश्यक हैं, जिनमें निम्नलिखित बिंदु विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं:

- डिजिटल अभिलेखीकरण: पारंपरिक गीतों, नृत्यों, लोककथाओं और चित्रकलाओं को रिकॉर्ड कर डिजिटल प्लेटफार्मों पर संरक्षित करना।
- शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में समावेश: स्कूल और उच्च शिक्षा स्तर पर छत्तीसगढ़ी संस्कृति के विविध पहलुओं को पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर छात्रों को सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ना। [33]
- सांस्कृतिक पर्यटन का संवर्धन: सिरपुर, मल्हार, रामगढ़ की गुफाएँ, दंतेश्वरी मंदिर जैसे स्थलों को सांस्कृतिक पर्यटन केंद्र बनाना।
- स्थानीय समुदाय आधारित संरक्षण: ग्राम स्तरीय समितियों के माध्यम से परंपरागत त्योहारों और सांस्कृतिक आयोजनों को पुनर्जीवित करना। [34]

9. निष्कर्ष

यह शोध छत्तीसगढ़ की लोकसंस्कृति के बहुआयामी पहलुओं का एक व्यापक एवं विश्लेषणात्मक परीक्षण प्रस्तुत करता है। छत्तीसगढ़ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से लेकर लोक परंपराओं, स्थापत्य, चित्रकला, धार्मिक विश्वासों, गीत-नृत्य, तथा आधुनिकता के प्रभाव तक हर स्तर पर यह स्पष्ट होता है कि राज्य की सांस्कृतिक पहचान गहरे सामाजिक एवं ऐतिहासिक अनुभवों से बनी है।

प्रमुख निष्कर्ष निम्नानुसार हैं:

- छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक अस्मिता में जनजातीय और गैर-जनजातीय समावेशी दृष्टिकोण प्रमुख है, जो सामाजिक समरसता को बढ़ावा देता है।
- परंपरागत लोकधरोहर न केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के साधन हैं, बल्कि सामाजिक नियंत्रण, सामुदायिक सहभागिता और नैतिक शिक्षा का माध्यम भी हैं।
- वैश्वीकरण और तकनीकी विकास ने जहां एक ओर परिवर्तन को उत्प्रेरित किया है, वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण के लिए नए अवसर भी प्रदान किए हैं।

10.सुझाव

- नीति निर्माण में छत्तीसगढ़ी लोकसंस्कृति को एक 'सांस्कृतिक संसाधन' के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए।
- अकादमिक शोध को इंटरडिसिप्लिनरी अप्रोच के साथ जोड़ते हुए सांस्कृतिक अध्ययन, इतिहास, समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के समावेश की आवश्यकता है।
- स्थानीय युवाओं को सांस्कृतिक विरासत का संरक्षक बनाने हेतु डिजिटल मंचों, पुरस्कार योजनाओं और स्थानीय संग्रहालयों की स्थापना जैसे उपायों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

REFERENCES

Sharma, R.S. Ancient Indian History and Culture. Orient Blackswan, 2009.
Elwin, Verrier. The Religion of an Indian Tribe. Oxford University Press, 1955.
Hauser, Beatrix. Hinduism in Tribal India. Routledge India, 2010.
Singh, K.S. People of India: Chhattisgarh. Anthropological Survey of India, 2004.
Tiwari, R.K. Lok Sanskriti evam Chhattisgarh. Hindi Granth Akademi, Bhopal, 2017.
Altekar, A. S. State and Government in Ancient India. Motilal Banarsidass, 2002.
Mitra, Debala. Sirpur: An Early Medieval Site in Chhattisgarh. Archaeological Survey of India, 1981.
Agrawal, D. P. The Archaeology of India. Curzon Press, 1982.
Singh, K. S. People of India: Chhattisgarh. Anthropological Survey of India, 2004.
Naik, S. C. Tribal Religion and Rituals: A Study of the Gonds of Bastar. Inter India Publications, 1990.
Tiwari, R. K. Lok Sanskriti evam Chhattisgarh. Hindi Granth Akademi, Bhopal, 2017.
Sahu, R. K. Chhattisgarh ke Lokgeet evam Samajik Chetna. Bhartiya Lok Sansadhan Shodh Kendra, Raipur, 2015.
Dube, S. C. Indian Society. National Book Trust, 2012.

Michell, George. The Hindu Temple: An Introduction to Its Meaning and Forms. University of Chicago Press, 1988.
Singh, Upendra. A History of Ancient and Early Medieval India. Pearson Education, 2009.
Mitra, Debala. Sirpur: An Early Medieval Site in Chhattisgarh. Archaeological Survey of India, 1981.
Pradhan, R.D. Tribal Art and Culture of Bastar. Aryan Books International, 2013.
Sharma, K.K. Folk Art and Painting in Central India. Publication Division, Ministry of I&B, Government of India, 2004.
Verma, A.K. Chhattisgarh ke Lokgeet: Ek Sanskritik Adhyayan. Chhattisgarh Lok Kala Akademi, Raipur, 2010.
Dangi, M. Folk Songs of Chhattisgarh. Central Institute of Indian Languages, Mysore, 2007.
Dubey, S. Chhattisgarh ke Lok Nritya. Bhartiya Lok Kala Mandal, Udaipur, 2016.
Government of Chhattisgarh. Chhattisgarh Tourism Policy 2020. Department of Tourism, Govt. of Chhattisgarh.
Elwin, Verrier. The Religion of an Indian Tribe. Oxford University Press, 1955.
Pandey, G. Chhattisgarh ki Gramya Dharmik Paramparaen. Tribal Research Institute, Raipur, 2003.
Dube, S.C. India's Changing Villages: Human Factors in Community Development. Routledge, 1958.
Hauser, Beatrix. Hinduism in Tribal India. Routledge India, 2010.
Sharma, S.K. Lok Anushthan aur Samajik Sanrachna: Chhattisgarh ke Sandarbh Mein. Deshbandhu Research Series, 2014.
Tiwari, D.P. Parampara aur Parivartan: Lok Sanskriti ka Adhunik Sandarbh. Granth Nirman Prakashan, Raipur, 2019.
Yadav, M. Shiksha, Sanskriti aur Yuva Chetna: Chhattisgarh ke Adhyayan Mein. Samaj Vigyan Journal, Vol. 12, 2021.
Ministry of Culture, Government of India. National Policy on Intangible Cultural Heritage, 2020.
Sharma, P. (2020). Globalization and Cultural Erosion in Tribal India. Journal of Cultural Studies, 12(2), 76–84.
Nanda, R. (2021). Cultural Markets and the Commodification of Tribal Art. Indian Journal of Anthropology, 6(1), 34–47.
Tiwari, M. K. (2019). Incorporating Indigenous Knowledge in Indian Education System: A Case of Chhattisgarh. International Review of Education, 65(3), 409–426.
Verma, A. (2020). Participatory Approaches in Folk Culture Preservation. Social Change Journal, 50(1), 22–38.